ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-5* Issue-5* August-2020
Anthology : The Research

आधुनिक दौर में वैवाहिक प्रतीकों की प्रासंगिकता

The Relevance of Marital Symbols in Modern Era

Paper Submission: 15/08/2020, Date of Acceptance: 25/08/2020, Date of Publication: 26/08/2020

सुभि धुसिया
आचार्य,
समाज शास्त्र विभाग,
दीनदयाल विश्वविद्यालय,
गोरखपुर, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश

उपयुक्त शोधपत्र में महिला द्वारा वैवाहिक प्रतीक चिन्हों का प्रयोग न करने पर पति द्वारा दायर तलाक की अर्जी को स्वीकार करने के गोवाहाटी हाईकोर्ट के निर्णय के मद्देनजर गोरखपुर नगर में विवाहित महिलाओं के विचार को जानने का प्रयास किया गया। जिसे महिलाओं ने आवश्यक तो माना पर ऐच्छिक भी। उपयुक्त निर्णय को पितृसत्तात्मक सोच का परिणाम माना जा सकता है जिसके हवा देने का काम इलेक्ट्रानिक मीडिया करता है।

In the appropriate paper, an attempt was made to find out the idea of married women in Gorakhpur city in view of the decision of the Goahati High Court to accept the divorce application filed by the husband for not using the marital insignia by the woman. Which women considered necessary but also optional. Appropriate judgment can be considered the result of patriarchal thinking, which is done by electronic media.

मुख्य शब्द : वैवाहिक प्रतीक, महिला समाज शिक्षित और रोजगार।
Marital Emblem, Women's Society Educated and Employed.

प्रस्तावना

विश्व में एकमात्र हिंदू धर्म में ही विवाह जन्म.जन्मांतर का संबंध माना जाता है। यह मान्यता हजारों वर्षों से चली आ रही है। हिंदू धर्म में विवाहित होना सामाजिक प्रतिष्ठा का सूचक है परंतु महिलाओं के संदर्भ में विवाहितष् होने के साथ ही विवाहित दिखना भी आवश्यक है। इसीलिए यह समाज महिलाओं द्वारा विवाहित प्रतीकों के प्रयोग को अवश्यंभावी मानता है। वैवाहिक प्रतीक जैसे. सिंदूर, बिंदी, लाल चूड़ी, बिछिया, मंगलसूत्र, पायल आदि। भारत में क्षेत्रवार वैवाहिक प्रतीक हैं। जैसे उत्तराखंड की विवाहित औरतें नथौली नामक बड़ी नाथ पहनती हैं जबकि मराठी औरतें सोने के मोती और महंगे पत्थरों से जड़ित नथ पहनती हैं। बंगाली औरतें हाथी दांत के बने सफेद कड़ेए लाल कड़े के साथ लोहे की चूड़ी भी पहनती हैं। तमिलनाडु की महिलाएं काले रंग के मोती का मंगलसूत्र ना धारण करके हल्दी से रंगे धागे को दो सोने के लाकेट के साथ पहनती है जो महिलाएं सोना पहन नहीं सकती हैं वे सिर्फ पीला धागा धारण करती है जबकि बिहारी महिलाएं काले मोती की चेन गोल्ड लाकेट के साथ पहनती हैं। अमूमन हिंदू महिलाएं शादी के बाद साड़ी ही पहनती हैं। परन्तु उत्तराखंड की पहाड़ी औरतें लाल लहंगा या साड़ी के साथ पिछौरा पहनती हैं।[1] मान्यता है कि विवाहित के मांग में सिंदूर की रेखा जितनी गाढ़ी होगी, पति की उम्र उतनी लंबी होगी। शिक्षा और तकनीकी युग में महिला समाज शिक्षित और रोजगार में संलग्न हैं, तो वैवाहिक प्रतीक के क्षेत्र में भी बदलाव हुए, उनमें अनिवार्यता कम हुई। परिस्थिति या इच्छानुरूप महिलाएं इसे धारण करती परंतु हाल में गुवाहाटी हाई कोर्ट के एक फैसले ने एक बहस को जन्म दिया। 29 जून 2020 में दिए गए फैसले के अनुसार एक हिंदू विवाहित महिला अगर शादी की रस्मों और रीति-रिवाजों के अनुसार सखा चूड़ियां पहनने और सिंदूर लगाने से मना करती है तो इससे उसकी शादी की अस्वीकृति के रूप में देखा जाएगा। ऐसी परिस्थिति में पति को पत्नी के साथ वैवाहिक संबंध जारी रखने के लिए मजबूर करना उत्पीड़न माना जा सकता है और इस आधार पर तलाक की अर्जी को स्वीकार कर लिया गया।[2]

इस आदेश के बाद लेखिका ने गोरखपुर और लखनऊ की 160 है विवाहित महिला से प्रश्नावली के माध्यम से वैवाहिक प्रतीक के प्रति उनके दृ टिकोण एवं प्रयोग की परिस्थितियों को जानना चाहा। इस हेतु महिलाओं के समूह को शिक्षित अशिक्षित, घरेलू कामकाजी की श्रेणियों में विभाजित किया गया। सर्वसम्मति से सभी विवाहित महिला ने विवाहित प्रतीक के प्रयोग को परंपरानुसार सही ठहराया है। चार महिला जिनका वैवाहिक जीवन सुखमय नहीं

है, वे इसका प्रयोग नाममात्र को करती हैं। निसंदेह अध्ययन वैवाहिक प्रतीकों के प्रति महिलाओं की पक्षधरता को साबित करता है परंतु इसमें कुछ विभिन्नता है, जैसे कि इस अध्ययन में 17 महिला अशिक्षित थींए वैवाहिक प्रतीकों के प्रति उनकी धारणा परंपरागत है अर्थात ना धारण करने से अशुभ होता है और समाज भी अच्छी निगाह से नहीं देखता, वहीं से 143 महिलाओं जो क्रमशः शिक्षित एवं कामकाजी हैं। वे वैवाहिक प्रतीकों को अपने व्यवसाय की प्रकृति यनर्स, डॉक्टर, अधिकारी के अनुरूप ही धारण करती हैं परंतु ससुराल या विशेष अवसरों पर भी वैसे ही परंपरागत रूप से तैयार होती हैं, जिसका कारण वे परंपराए पति के प्रति प्रेम, परिजनों को अच्छा लगना बताती हैं। सिंदूर एवं बिंदी की महत्ता को सभी महिलाओं ने सर्वसम्मति से स्वीकारा है। इस आधार पर देखें तो यह धार्मिक मसला ज्यादा दिखता है क्योंकि अन्य धर्मों में ऐसी मान्यता ना होने के कारण ही वहां भी महिलाएं इसका प्रयोग नहीं करती। वैवाहिक चिन्हों के प्रयोगों को अच्छा या बुरा में नहीं बांटा सकते। इसका आधार ऐच्छिक होना चाहिए।

महिला द्वारा इनका प्रयोग ना करना, विवाह में आस्था ना होना कैसे हो सकता है? प्रश्न यह है कि सिर्फ महिलाओं को ही अपनी वैवाहिक स्थिति को बताने के लिए प्रतीक क्यों पहनने पड़ते हैं निरूसंदेह इनके प्रयोग से महिला सुंदर लगती है परंतु विवाहोपरांत यह पहनने का चुनाव महिला की इच्छा पर होना चाहिए, रोज पहनेगी या कभी-कभी। आज जब महिला हवाई-जहाज तक उड़ा रही हो तो क्या प्रतीकों के द्वारा उसकी आस्था तय होगी। कई बार आधुनिक परिधानों में यह चिन्ह अनावश्यक लगते हैं, परंतु यह ऐच्छिक मसला है। मुख्य मुद्दा जब पुरुषों के लिए वैवाहिक चिन्ह नहीं तो सिर्फ महिलाओं के लिए क्यों वैवाहिक प्रतीकों को ना पहनना उस महिला के चरित्र का निर्णायक नहीं बन सकता। कई बार वैवाहिक जीवन खुशहाल नहीं है तो ना ही ये चिन्ह महिला को खुशहाल बना पाते, ना ही विवाह तोड़ने से रोक पाते हैं। जैसे कि संबंधित अध्ययन में 4 महिलाओं के साथ हुआ। मुख्यतः यह महिलाओं के लिए पितृसत्तात्मक समाज में सुरक्षा की गारंटी है। इस संदर्भ में बुलबुल फिल्म के एक दृश्य का जिक्र समीचीन है, जिसमें बच्ची अपनी आंटी से बिछिया पहनने का कारण पूछती है। आंटी जवाब देती है कि इससे वह दूर नहीं जाएगी। कहीं ना कहीं ये प्रतीक महिलाओं को बंधन में रहना सिखाते हैंए जबकि पुरुष को आजाद रखा गया। वास्तव में विवाह परस्पर प्यार और सम्मान का रिश्ता है, जिसके लिए सिर्फ प्रतीक जिम्मेदार नहीं।

उपर्युक्त प्रकरण को दुर्खीम का सामाजिक तथ्य सामाजिक घटनाओं के अध्ययन की प्रणाली के आधार पर समझा जा सकता है। ये सामाजिक तथ्य व्यक्ति से परे हैं, अतः उसके बाद भी बने रहते हैं।[3] प्रथा, परंपरा आदि सामाजिक तथ्य के ही उदाहरण हैं। महिलाओं से संबंधित सामाजिक तथ्य आज भी महिलाओं को शासित करते हैं। जैसे ये वैवाहिक प्रतीक, विवाहित महिला की निशानी है, उसी तरह सांड की आंख फिल्म में नीले और पीले दुपट्टे महिला की पहचान है ना कि उनके अपने चेहरे। यह फिल्म हरियाणा की दो बुजुर्ग निशानेबाज महिलाओं की वास्तविक जीवन पर आधारित है।

वैवाहिकों प्रतीकों के प्रति संवेदनशीलता को बढ़ाने में हमारे चैनल टी. वी. धारावाहिक भी पीछे नहीं है। इन धारावाहिकों में भारी-भारी आभूषणों से लकदक महिलाएं घर के भीतर से बाहर तक दिखती हैं। इन धारावाहिकों ने महिलाओं की परंपरागत छवि को ही सुदृढ़ किया है। जबकि 1990 के पहले के रजनी, उड़ान, हम लोग जैसे धारावाहिक इनके उलट थे। इन्हीं धारावाहिकों की वजह से कई स्थानीय त्यौहार करवाचौथ, छठ आदि वैश्विक हो गया है। परंपराओं का संरक्षण आवश्यक है परंतु समयानुकूल परिवर्तन स्वीकारने से हम पीढ़ियों के टकराव से काफी हद तक बच जाएंगे।

अध्ययन का उद्देश्य

उपयुक्त विषय को बतौर अध्ययन विषय चुनने का उद्देश्य हाल ही में दिया गया गोवाहाटी हाईकोर्ट का विर्णय था। जिसके मद्देनजर आम महिलाओं का वैवाहिक चिन्हों के प्रयोग के संदर्भ में विचार जानना था। साथ ही इलेक्ट्रानिक मीडिया द्वारा आधुनिक मूल्यों के प्रसार के स्थान पर परंपरागत मूल्यों के प्रसार को भी चिन्हित किया गया है।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि आधुनिक युग में भी वैवाहिक प्रतीक चिन्हों के प्रति महिलाओं का लगाव है। समय और स्थान के साथ इसमें बदलाव जरूर दिखता है परंतु नकारात्मक भाव नहीं दिखता। अलबत्ता मीडिया ने समयानुकूल बदलाव के लिए पहल नहीं की।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *कल्पनाए "symbol of marriage in India", Indiavivid.com 18 जुलाई 2018*
2. *मिश्रा शशि, नवभारत टाइम्स डाट काम, 29 जून 2020*
3. *समाजशास्त्रीय चिंतक एवं सिद्धांतकार इमाईल दुर्खीम रावत पब्लिकेशन, नई दिल्ली 2009।*